VAAGDHARA

वातें वागधारा नी

मार्च 2026

अंक 70

VAAGDHARA

प्यारे किसान भाईयों–बहनों, स्वराज के साथियों, प्यारे बच्चों, संगठन के पदाधिकारीयों एवं वागधारा टीम के साथियों आप सभी को जय गुरू! जय स्वराज! जय जगत!

होली के त्यौहार की आप सभी को बहुत सारी शुभकामनाएँ, रबी की फसल आने वाली है उसकी कटाई कई खेतों में शुरू हो जायेगी। बहुत उपजे, हमारे कोठारे भरे रहें, इस अवसर पर हमारी खाद्य सुरक्षा बनी रहें उसके लिए बहुत सारी शुभकामनाएं।

साथियों पत्रिका के माध्यम से, जब आप से रूबरू होता हूँ, तो कई सारे विषय होते हैं चर्चा करने के लिए, परन्तु जिस प्रकार से इस बार स्वराज समागम शिविर में संगठन के पदाधीकारियों द्वारा, युवाओं द्वारा, हमारी स्वराज, संस्कृति और आत्म निर्भरता को लेकर चिंतन और सपनों को लेकर जो बात की गई, वो बहुत महत्वपूर्ण थी। जब हम किसी विषय को लेकर चर्चा करते हैं और उस चर्चा को अगर स्वरूप नहीं दे पाते हैं, उसकों हम जमीन पर नहीं उतार पाते हैं, उस कार्य को नहीं कर पाते हैं, तो केवल बाते बन करके रह जाती हैं और अगर बाते बन करके रह जाएगी तो उससे विश्वास की कमी हो जाएगी। समुदाय की संगठन से और हमारी खुद की हम पर से विश्वास की कमी हो जाएगी, इसलिए हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम उस विश्वास को बनाने के लिए जो सपने हमने देखे थें, जो कल्पना हमने की थी, जो निर्णय हमने लिये, उस शिवीर के दौरान उसको करने के लिए हम संगठन में, अपने गाँव में, अपने परिवार में बैठ करके अच्छे तरीके से योजना बनाएं और उसको आमली जामा पहनाने के लिए या मूर्तरूप देने के लिए कार्य शुरू कर दे।

दूसरा विषय जो महत्वपूर्ण है चुंकी प्रतिवर्ष और इस पत्रिका का पहला शीर्षक ही गर्मी की खेती को लेकर हैं, जो की पिछले कई सालों से, मैं आपसे चर्चा के दौरान संवाद में करता आया हूँ। तीस साल पहले जब मैंने खेती शुरू की थी तब भी मेरे लिये यह महत्वपूर्ण होता था कि एक गर्मी की खेती परिवार का जीवन बदल सकती है, एक गर्मी की खेती हमारी मिट्टी के स्वास्थ को बदल सकती है, एक गर्मी की खेती परिवार का जीवन बदल सकती है आजीविका में सालभर की कमाई के बराबर हमें कमाई दे सकती है एक गर्मी की खेती से इतना चारा प्राप्त हो सकता है और वो भी मुंग का पौष्टिक घास–भूसा मुंग, जो की मवेश्यों को स्वास्थ और पोषण के लिए मददगार होता है और केवल मात्र मुंग की खेती और गर्मी की खेती हमारी मिट्टी स्वास्थ बहुत महत्वपुर्ण होती है वो मिट्टी के अंदर विद्यमान किटाणु एवं जीवाणओं को तैयार कर देती हैं, जो आने वाली फसलों के लिए मददगार होती हैं। और अंत में जो सबसे महत्वपुर्ण बात है, कि गर्मी की खेती हमारे परिवार के पलायन को रोक देती हैं। अगर हर परिवार, हर फला और प्रत्येक पंचायत ये तय कर ले और संगठन उसके लिए मुहिम चला ले, आंदोलन के रूप में ले जाएं, कि हम इस बार गर्मी में एक तीसरी फसल के रूप में आयाम स्थापित करेंगे, तो हमारे क्षेत्र को, हमारे संगठन को, परिवार को आबाद होने से कोई नहीं रोक सकता, हमारे मवेशियों की खुशहाली को कोई नहीं रोक सकता, और प्रकृती की सुरक्षा को कोई कम नहीं कर सकता।

जैसे शुरूआत में मैंने कहा था वैसे अंत में मैं फिर से कहना चाहूँगा होली का त्यौहार हमारे गैर नृत्य और हमारी संस्कृति का त्यौहार है, हमारे आनंद और उल्लास का त्यौहार है, गैर नृत्य के बिना हमारा जीवन अधूरा है, हमारी संस्कृति अधूरी है, हमें हमारे पूर्वजों से ये चर्चा जरूर करनी चाहिए कि होली के त्योंहार में हमारी संस्कृति के क्या रिवाज थे, क्या करते थे, क्यों मनाते थे और उसका हमारे जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है, किस प्रकार से हम पुनः हमारी उस आदिवासी संस्कृति को, हमारे क्षेत्र की परम्परा को अपने पूर्वजों से समझें और उसको स्थापित करें ताकि हम पूरी दुनिया को खुशहाली के उस मार्ग को बता पाएं उस आनन्द के मार्ग को बता पाएं और सारी दुनिया की समृद्धि के सपने को साकार होता देख पाएं, हम उदाहरण बन पाएं।

आपके इसी प्रयास के लिए मैं पुनः शुभकामनाएं देता हूँ और वही आग्रह केवल मात्र स्वयं पढ़कर इस बात को अपने तक ना रखें। इससे आगे बढ़ाएं यदि ये ध्यान केवल हम तक रह जाएगा तो हम हमारे भाईयों को खुशहाल नहीं कर पाएंगे। इसे अधिक से अधिक समुदाय तक पहुचाना है।

जय गुरू, जय स्वराज, जय जगत!

आपका अपना
जयेश जोशी

जायद (ग्रीष्मकालीन) मूंग की खेती मिट्टी पोषण और स्वावलंबन की सशक्त पहल

भारत में आज किसान संकट अपने चरम पर है। बढ़ती लागत, घटती मिट्टी की उर्वरता, जलवायु परिवर्तन और बाजार की अनिश्चितता ने खेती को चुनौतीपूर्ण बना दिया है। ऐसे समय में आवश्यकता है ऐसे कृषि मॉडल , जो मिट्टी की उत्पादकता बढ़ाए, लागत घटाए और किसानों को लाभ सुनिश्चित करे। समाधान की खोज दूर नहीं है–राजस्थान के आदिवासी क्षेत्रों में प्रचलित जायद मूंग की खेती स्वयं एक सशक्त और टिकाऊ मॉडल प्रस्तुत करती है।

दक्षिण राजस्थान के वागड़ अंचल सहित झाबुआ, रतलाम और दाहोद जैसे अर्ध–शुष्क आदिवासी क्षेत्रों में किसान मुख्यतः तीन मौसमों–रबी, खरीफ व जायद में खेती करते हैं। फरवरी से मई के बीच आने वाला जायद मौसम प्रायः उपेक्षित रह जाता है, जबकि यह मिट्टी के पोषण, अतिरिक्त आय और कृषि चक्र संतुलन की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है।

जायद में मूंग की खेती विशेष महत्व रखती है। मूंग एक दलहनी फसल है, जो उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन का स्रोत होने के साथ–साथ मिट्टी के लिए भी अत्यंत लाभकारी है। इसकी जड़ों में बनने वाली गांठें (नोड्यूल) वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर करती हैं। यह प्राकृतिक प्रक्रिया मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती है और रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करती है। मूंग की फसल अगली खरीफ फसल के लिए भूमि को तैयार करती है। जायद फसलें शुष्क गर्मी के लिए उपयुक्त होती हैं। इनकी बुवाई फरवरी से मई के बीच की जाती है। ये मिट्टी की भौतिक संरचना में सुधार करती हैं, नाइट्रोजन स्थिरीकरण को बढ़ाती हैं।

जायद मूंग की एक बड़ी विशेषता इसकी कम अवधि है। लगभग 60–70 दिनों में तैयार हो जाती है, सीमित सिंचाई में भी अच्छी पैदावार देती है। सामान्यतः 3–4 सिंचाई पर्याप्त होती हैं। यदि ड्रिप या नाली सिंचाई अपनाई जाए तो पानी की पर्याप्त बचत संभव है। बुवाई मार्च मध्य से अप्रैल प्रथम सप्ताह के बीच करना उपयुक्त रहता है। कतारों में बुवाई से निराई–गुड़ाई और कीट प्रबंधन आसान हो जाता है। बीज को गोमूत्र, जीवामृत या बीजामृत से उपचारित कर बोना लाभकारी सिद्ध होता है।

मूंग खेती केवल आय का साधन नहीं, अपितु पोषण सुरक्षा का माध्यम भी है। मूंगदाल प्रोटीन से भरपूर होती है। यदि किसान परिवार जायद में मूंग उगाकर वर्ष भर की दाल सुरक्षित कर ले, तो यह पोषण स्वावलंबन की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होगा। कटाई के बाद बचा डंठल पशुओं के लिए पौष्टिक चारा बनता है, जिससे पशुधन की सेहत और दूध उत्पादन में सुधार होता है।

भारत विश्व के सबसे बड़े दलहन उत्पादक और उपभोक्ता देशों में से एक है। कनाडा, अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, म्यांमार व तुर्की जैसे देश भारत में दलहन उत्पादन पर विशेष ध्यान रखते हैं, क्योंकि भारतीय बाजार का वैश्विक प्रभाव है। ऐसे में जायद मूंग उत्पादन को बढ़ावा देना न केवल स्थानीय बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर भी महत्वपूर्ण है।

जायद मूंग की खेती मिट्टी सुधार, जल संरक्षण, पोषण सुरक्षा और आय वृद्धि–इन सभी उद्देश्यों को एक साथ साधने वाली फसल है। रबी के बाद खेत खाली छोड़ने के बजाय जायद में मूंग की खेती अपनाना छोटे व आदिवासी किसानों के लिए आत्मनिर्भरता की दिशा में एक सशक्त कदम है। जब किसान जायद में मूंग का बीज बोता है, तब वह केवल फसल नहीं उगाता–वह मिट्टी की सेहत, परिवार के पोषण और अपनी आर्थिक मजबूती का भविष्य तैयार करता है।

जायद मूंग क्यों है महत्वपूर्ण?

जायद मूंग केवल एक फसल नहीं, बल्कि टिकाऊ खेती की दिशा में एक ठोस कदम है।

मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि– मूंग एक दलहनी फसल है जिसकी जड़ों में राइजोबियम जीवाणु होते हैं। ये जीवाणु वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर कर मिट्टी में उपलब्ध कराते हैं, जिससे खेत की प्राकृतिक उर्वरता बढ़ती है और रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता घटती है।

प्राकृतिक हरी खाद– मूंग के सूखे पत्ते खेत में गिरकर हरी खाद का कार्य करते हैं। इससे मिट्टी की संरचना सुधरती है और अगली फसल के लिए पोषक तत्व उपलब्ध होते हैं।

कम पानी में सफल– जायद मूंग को अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती। एक से दो सिंचाई में भी अच्छी पैदावार संभव है, जिससे जल संरक्षण होता है।

कम अवधि, कम जोखिम – 50–60 दिनों में तैयार होने वाली यह फसल किसानों के लिए कम जोखिम वाली है। अल्प अवधि में उत्पादन और आय दोनों सुनिश्चित होते हैं।

परिवार के लिए पोषण सुरक्षा – मूंग की दाल प्रोटीन से भरपूर होती है। यदि किसान परिवार जायद में मूंग उगाकर घर की सालभर की दाल का उत्पादन कर ले, तो पोषण स्वराज की दिशा में बड़ा कदम उठाया जा सकता है।

पशुओं के लिए पौष्टिक चारा– कटाई के बाद बचा डंठल और भूसा पशुओं के लिए उत्तम प्रोटीन स्रोत है, जिससे दूध उत्पादन और पशु स्वास्थ्य में सुधार होता है।

आर्थिक सशक्तिकरण – स्थानीय कहावत है–गर्मी में मूंग बोई, तो कर्ज भी खोई। **अर्थात जायद में मूंग की खेती किसान की आर्थिक स्थिति को मजबूत करती है।**

उपयुक्त भूमि और जलवायु – मूंग की फसल के लिए गर्म जलवायु आवश्यक है। यह सभी प्रकार की मिट्टी में उगाई जा सकती है, लेकिन मध्यम दोमट या बलुई दोमट भूमि, जिसमें जल निकास की अच्छी व्यवस्था हो और pH मान 7–8 के बीच हो, सर्वोत्तम मानी जाती है। जलभराव वाली भूमि से बचना चाहिए, क्योंकि अत्यधिक नमी से जड़ों को नुकसान पहुँचता है।

खेत की तैयारी – ग्रीष्मकालीन जुताई मूंग की खेती का आधार है।

- पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने पर नीचे की मिट्टी ऊपर व कीट–रोग नष्ट हों।
- इसके बाद 2–3 जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी बना लें।
- अंतिम जुताई में हंबाड़ी या पाटा लगाकर खेत समतल करें, जिससे नमी लंबे समय तक संरक्षित रहे। यह तैयारी न केवल मूंग के लिए, बल्कि आने वाली खरीफ फसलों के लिए भी लाभकारी सिद्ध होती है।

बुवाई का समय और विधि–समय पर बुवाई सफलता की कुंजी है। परंपरागत रूप से होली के दसवें दिन (दशामाता के आसपास) बुवाई को शुभ और लाभकारी माना जाता है।

बीज की मात्रा – 15–20 किलोग्राम प्रति एकड़ पर्याप्त है।

बुवाई के तरीके

- छिड़काव विधि (ब्रॉडकास्टिंग)
- पंक्तिबद्ध बुवाई (30–45 सेमी दूरी पर)
- हल्की जुताई के बाद सीधी बुवाई

पंक्तिबद्ध बुवाई से निराई–गुड़ाई और कीट नियंत्रण में सुविधा होती है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन – मिट्टी की आवश्यकता के आधार पर उर्वरक देना सर्वोत्तम है। फिर भी सामान्यत–

- 5–10 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर दें।
- परम्परागत उर्वरकों का संतुलित उपयोग।
- जैविक खाद मिट्टी के दीर्घकालिक स्वास्थ्य के लिए अत्यंत आवश्यक।
- सिंचाई प्रबंधन – मूंग को अत्यधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती।
- पहली सिंचाई बुवाई के 20–25 दिन बाद।
- बाद में 10–15 दिन के अंतराल पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।
- फूल और दाना बनने के समय हल्की सिंचाई लाभकारी होती है।
- जलभराव से बचाव अनिवार्य है।

रोग और कीट प्रबंधन – मूंग की फसल में कुछ प्रमुख रोग और कीट देखे जाते हैं–

प्रमुख रोग–

1 पीला मोजैक रोग – (सफेद मक्खी)–

पत्तियों का रस चूसती है और पीला मोजेक रोग फैलाती है।

लक्षण : पत्तियां पीली, मुड़ना, वृद्धि रुकना।

2. माहू रोग –

पत्तियों और कोमल भागों से रस चूसता है।

3 फफूंद जनित रोग–

लक्षण – पत्तियों पर सफेद चूर्ण जैसा पदार्थ।

नियंत्रण उपाय–

- रोगरोधी किस्मों का चयन
- समय पर बुवाई
- खेत में जल निकास की व्यवस्था
- जैविक कीटनाशकों व नीम आधारित घोल का प्रयोग
- समेकित कीट प्रबंधन अपनाने से रासायनिक दवाओं की आवश्यकता कम होती है।

कटाई व भंडारण–जब लगभग 80% फलियाँ पक जाएँ, तब कटाई करें। फसल को अच्छी तरह सुखाकर सुरक्षित स्थान पर भंडारित करें। उचित भंडारण से दाल की गुणवत्ता बनी रहती है और नुकसान से बचाव होता है।

सामुदायिक और स्वराज की दृष्टि से महत्व – जायद मूंग की खेती केवल व्यक्तिगत लाभ तक सीमित नहीं है। यदि गाँव स्तर पर सामूहिक रूप से इसे अपनाया जाए, तो–

- स्थानीयस्तर पर दाल की उपलब्धता बढ़ेगी।
- कुपोषण की समस्या में कमी आएगी।
- रासायनिक उर्वरकों पर खर्च घटेगा।
- मिट्टी और जल संसाधनों का संरक्षण होगा।

यह खेती पोषण स्वराज, खाद्य स्वराज और आजीविका स्वराज–तीनों को मजबूत करती है। ग्रीष्मकालीन जायद मूंग की खेती कम लागत, कम पानी और कम समय में अधिक लाभ देने वाली फसल है। यह मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती है, परिवार को पोषण देती है, पशुओं को चारा उपलब्ध कराती है और किसान को आर्थिक रूप से सशक्त बनाती है। आज आवश्यकता है कि किसान भाई–बहन समय पर बुवाई करें, पारंपरिक ज्ञान और वैज्ञानिक तकनीकों का समन्वय करें और जायद मूंग को अपने खेती चक्र का अनिवार्य हिस्सा बनाएं।

सामूहिक संकल्प से समृद्धि : मूंग से मजबूत हुआ माँण्डली

राजस्थान के घाटोल ब्लॉक का माँण्डली गाँव कुछ वर्ष पहले तक हर गर्मी में एक जैसी तस्वीर देखता था। मार्च से मई आते ही खेत खाली पड़े रहते थे। लगभग 30–35 परिवार मजदूरी के लिए गुजरात, मध्यप्रदेश की ओर पलायन कर जाते थे। खेतों में काम नहीं था, आय का कोई स्थायी स्रोत नहीं था और खेती की बढ़ती लागत किसानों को चिंतित करती थी। गर्मी का मौसम गाँव के लिए ठहराव और निर्भरता का समय बन चुका था।

सवाल जिसने दिशा बदली – एक ग्राम बैठक में चर्चा के दौरान एक सरल, लेकिन महत्वपूर्ण प्रश्न उठा–**"जब हमारे पास जमीन, पानी और श्रम है, तो गर्मी में खेत खाली क्यों रहें?"** यह प्रश्न केवल फसल चयन का नहीं था, बल्कि निर्णय अपने हाथ में लेने का था। गाँव ने तय किया कि समाधान बाहर से नहीं, अपने संसाधनों के बेहतर उपयोग से खोजा जाएगा। ऐसी फसल की तलाश शुरू हुई जो कम समय में तैयार हो, कम पानी ले, कम लागत में हो और मिट्टी के लिए भी लाभकारी हो।

उत्तर मिला–मूंग।

मूंग क्यों बनी परिवर्तन की धुरी?

मूंग 60–70 दिनों में तैयार होने वाली दलहनी फसल है। इसे केवल 3–4 सिंचाई की आवश्यकता होती है और यह 30–40 डिग्री तापमान तक सहन कर सकती है। इसके साथ ही, मूंग की जड़ों में बनने वाली राइजोबियम ग्रंथियाँ वायुमंडलीय नाइट्रोजन को मिट्टी में स्थिर करती हैं। इससे भूमि की उर्वरता बढ़ती है और अगली फसल को लाभ मिलता है। इस प्रकार मूंग केवल नकदी फसल नहीं, बल्कि मिट्टी सुधार और संतुलित फसल चक्र का माध्यम भी है।

सामूहिक निर्णय – स्वराज का अभ्यास शुरुआत में गाँव के केवल 8 किसान मूंग उगाते थे। लेकिन इस बार निर्णय व्यक्तिगत नहीं, सामूहिक था। ग्राम स्तर पर विचार–विमर्श के बाद 92 किसानों ने मिलकर 188 बीघा भूमि पर ग्रीष्मकालीन मूंग की सामूहिक खेती का निर्णय लिया। **उन्होंने यह भी तय किया कि खेती स्थानीय संसाधनों पर आधारित होगी।**

- रासायनिक खाद और दवाइयों का उपयोग नहीं किया जाएगा।
- उकेड़ा खाद और जीवामृत का प्रयोग किया जाएगा।
- नीम आधारित जैविक कीट नियंत्रण अपनाया जाएगा।
- अपनी फसल से बीज संरक्षित किया जाएगा।

निर्णय गाँव ने लिया, संसाधन गाँव के थे और जोखिम भी सामूहिक रूप से साझा किया गया। यही स्वराज का वास्तविक अभ्यास था।

परिणाम – जब पूरा गाँव बना उदाहरण – 60–70 दिनों बाद माँण्डली के खेतों में मूंग की हरियाली दिखाई दी। औसतन प्रत्येक किसान को 2–3 क्विंटल उत्पादन प्राप्त हुआ और प्रति किसान लगभग 10,000–12,000 की आय हुई। लेकिन इस परिवर्तन की असली ताकत व्यक्तिगत लाभ में नहीं, बल्कि सामूहिक प्रभाव में है। जब 92 किसानों को औसतन 10,000–12,000 की आय हुई, तो गाँव में कुल अनुमानित 9 से 11 लाख रुपये की अतिरिक्त आमदनी हुई। यह वही समय था जब पहले पैसा मजदूरी के रूप में गाँव से बाहर चला जाता था। अब वहीं धन गाँव के भीतर रहा–स्थानीय दुकानों, आवश्यक वस्तुओं व छोटे व्यापार में खर्च हुआ। गर्मी का मौसम पहली बार गाँव की अर्थव्यवस्था को मजबूत कर गया।

पलायन में कमी, विश्वास में वृद्धि– जहाँ पहले 30–35 परिवार गर्मी में बाहर जाते थे, अब अनेक परिवारों ने गाँव में रहकर खेती को प्राथमिकता दी। गर्मी का मौसम अब बेरोजगारी का समय नहीं रहा, बल्कि श्रम और आय का अवसर बन गया। किसानों के मन में यह विश्वास जागा कि यदि निर्णय सामूहिक रूप से लिए जाएँ और स्थानीय संसाधनों पर भरोसा किया जाए, तो परिवर्तन संभव है। मिट्टी, बीज और श्रम पर स्थानीय नियंत्रण मूंग की खेती के बाद किसानों ने देखा कि अगली खरीफ फसल की बढ़वार बेहतर हुई। मिट्टी अधिक जीवंत और उपजाऊ प्रतीत हुई। अपनी फसल से बीज सुरक्षित कर किसानों ने बाजार पर निर्भरता कम की। मिट्टी, बीज और श्रम– तीनों पर स्थानीय नियंत्रण बढ़ा। यही स्वराज की मूल भावना है–अपने संसाधनों पर अधिकार और अपने निर्णय स्वयं लेने की क्षमता।

एक फसल से अधिक, एक विचार – आज माँण्डली में गर्मी का अर्थ खाली खेत नहीं है। खेतों में हरियाली है, किसानों के पास आय है, गाँव में आत्मविश्वास है। मुंग ने यहाँ केवल उत्पादन नहीं बढ़ाया। उसने निर्भरता घटाई, पलायन रोका व सामूहिक शक्ति का एहसास कराया। माँण्डली में इस बार मूंग केवल खेतों में नहीं उगी–वह गाँव की अर्थव्यवस्था में भी फली–फूली। यह कहानी बताती है कि जब समुदाय अपने संसाधनों का सम्मान करता है और सामूहिक निर्णय लेता है, तो स्वराज केवल विचार नहीं, बल्कि व्यवहारिक सच्चाई बन जाता है।

वनोपजों के अनुमानित भाव : नीमच मंडी में विभिन्न वनोपज के भाव नीचे दिए गए हैं –

दिनांक : 18 फरवरी, 2026

फसल	न्यूनतम भाव	अधिकतम भाव	औसतन भाव
गेंहूँ	2201	3025	2580
मक्का	1585	1700	1625
जौ	1979	2452	2350
उडद	4591	6767	5800
चना	3700	5540	4850
मसूर	5550	6186	6000

फसल	न्यूनतम भाव	अधिकतम भाव	औसतन भाव
चना डालर	3900	7550	7050
सोयाबीन	4100	5447	5000
रायडा	5000	6350	6100
मूंगफली	4500	7300	6800
अलसी	5060	7320	6900
तिल्ली	6111	9326	8920

फसल	न्यूनतम भाव	अधिकतम भाव	औसतन भाव
पोस्ता	78000	133500	115000
मैथी	3400	5650	4950
धनिया	6691	9751	8500
अजवाइन	5500	13900	11500
इसबगोल	10000	13000	11500
कलौंजी	16000	23451	20500

फसल	न्यूनतम भाव	अधिकतम भाव	औसतन भाव
लहसुन	3000	13121	6400
प्याज	322	1281	600
अश्वगंधा	11100	26500	20000
तुलसी बीज	9200	16711	14200
चिया बीज	8600	17652	15500
किनोवा	2871	5760	4950

ध्यान दें : ये भाव अनुमानित हैं और मंडी में फसल की गुणवत्ता और मांग के अनुसार बदल सकते हैं। किसी भी लेन–देन से पहले मंडी में वर्तमान भाव की पुष्टि करना आवश्यक है।

पलायन और बच्चों का भविष्य ''मेहनत, मजबूरी और बदलता बचपन''

वागड़ क्षेत्र पहाड़ियों, जंगलों, नदी–नालों और मेहनती आदिवासी समुदाय के लिए पहचाना जाता है। यहाँ के लोग प्रकृति से गहराई से जुड़े हैं और अपनी मेहनत से जीवन चला रहे हैं। लेकिन पिछले कुछ वर्षों में एक बदलाव साफ दिख रहा है। बरसात समय पर नहीं हो रही है, खेतों में पहले जैसी उपज नहीं हो पा रही है और गाँव में काम की कमी पड़ रही है। ऐसे हालात में कई परिवार अपने घर, खेत और गाँव छोड़कर बाहर मजदूरी के लिए जा रहे हैं।

जब परिवार गुजरात, सूरत एवं अन्य शहरों की ओर जा रहे हैं तब केवल जगह नहीं बदल रही है, बच्चों का जीवन भी बदल रहा है। कुछ बच्चे माता–पिता के साथ जा रहे हैं और ईंट–भट्टों, निर्माण स्थलों या खेतों के पास अस्थायी बस्तियों में रह रहे हैं। कुछ बच्चे गाँव में दादा–दादी या रिश्तेदारों के साथ रह रहे हैं।

दोनों ही परिस्थितियों में बच्चों का बचपन प्रभावित हो रहा है। माता–पिता से दूर रहने पर बच्चों के मन में खालीपन बढ़ रहा है। वे अपने मन की बात खुलकर नहीं कह पा रहे हैं। कुछ बच्चे चुप हो रहे हैं कुछ में गुस्सा बढ़ रहा है। जो बच्चे पहले खेल रहे थे, हँस रहे थे, वे अब जिम्मेदारियों के बोझ तले दब रहे हैं। बड़े बच्चे छोटे भाई–बहनों की देखभाल कर रहे हैं। घर और खेत की जिम्मेदारी उनके कंधों पर आ रही है। धीरे–धीरे खेल और पढ़ाई पीछे छूट रहे हैं।

शिक्षा और सुरक्षा–सबसे बड़ी चुनौती

पलायन का सबसे गहरा असर बच्चों की शिक्षा पर पड़ रहा है। जब परिवार बार–बार जगह बदल रहे हैं, तो बच्चों का स्कूल छूट रहा है। कई बार नामांकन तो हो रहा है लेकिन पढ़ाई नियमित नहीं चल रही है। नई जगह की भाषा अलग है, पाठ्यक्रम अलग है और माहौल नया है। बच्चे खुद को असहज महसूस कर रहे हैं और पढ़ाई में मन कम लग रहा है। कुछ बच्चे धीरे–धीरे पीछे रह रहे हैं और अंत में स्कूल छोड़ रहे हैं। यह सिर्फ एक कक्षा छूटना नहीं है बल्कि उनके सपनों का छोटा होते जाना है। जो बच्चे मजदूरी स्थल पर माता–पिता के साथ रह रहे हैं, वे कई बार काम में भी लग रहे हैं। पढ़ाई का समय काम में जा रहा है। वहीं गाँव में पीछे रह गए बच्चों पर निगरानी कम पड़ रही है। पढ़ाई में मार्गदर्शन नहीं मिल रहा है और वे दिशा खो रहे हैं।

सुरक्षा की दृष्टि से भी चिंता बढ़ रही है। बाहर के वातावरण में बच्चों को हर समय सुरक्षित माहौल नहीं मिल रहा है। बाल मजदूरी का खतरा बढ़ रहा है। आर्थिक दबाव के कारण कुछ परिवार बाल विवाह जैसे निर्णय ले रहे हैं जिससे बालिकाओं का भविष्य प्रभावित हो रहा है।

पहचान पत्र और जरूरी दस्तावेज पूरे नहीं होने से सरकारी योजनाओं का लाभ नहीं मिल पा रहा है। इस तरह पलायन बच्चों की शिक्षा, सुरक्षा और आत्मविश्वास तीनों पर असर डाल रहा है। लेकिन यह केवल समस्या की कहानी नहीं बन रही है। यह जागरूकता और बदलाव की दिशा भी दिखा रही है।

बाल स्वराज समूह का योगदान

बाल स्वराज समूह बच्चों को अपनी बात रखने का मंच दे। समूह की नियमित बैठकों में बच्चे अपनी समस्याएँ साझा करें चाहे वह स्कूल छूटने की बात हो, मजदूरी का दबाव हो या बाल विवाह का खतरा हो।

बाल स्वराज समूह यह सुनिश्चित करे कि–

- कोई भी बच्चा पढ़ाई से दूर न रहे।
- जो बच्चे पलायन के कारण स्कूल से छूट रहे हों, उन्हें दोबारा जोड़ने की पहल करे।
- बाल मजदूरी और बाल विवाह के मामलों की जानकारी ग्रामस्वराज समूह, समुदाय और पंचायत तक पहुँचाए।

समूह बच्चों में आत्मविश्वास बढ़ाए। वे अपने अधिकारों को समझें और ग्राम सभा में अपनी बात रखें। बाल ग्राम सभा के माध्यम से बच्चे यह प्रस्ताव रखें कि गाँव में हर बच्चा स्कूल से जुड़ा रहे। बाल स्वराज समूह जागरूकता रैली, पोस्टर और संवाद के माध्यम से पूरे गाँव में संदेश फैलाए।

ग्राम स्वराज समूह का योगदान–

ग्राम स्वराज समूह गाँव के सामूहिक नेतृत्व का केंद्र बने। यह समूह केवल चर्चा न करे बल्कि बच्चों के भविष्य को सुरक्षित रखने की जिम्मेदारी भी निभाए। ग्राम स्वराज समूह यह सुनिश्चित करे कि पलायन के कारण कोई भी बच्चा शिक्षा से वंचित न रहे। यदि कोई परिवार बाहर जा रहा होतो उसकी जानकारी पहले से रखे। बच्चों की स्थिति पर नजर बनाए रखे और स्कूल से उनका जुड़ाव बना रहे।

- शिक्षा के क्षेत्र में भूमिका
- स्कूल से छूटे बच्चों की पहचान कराए।
- शिक्षकों के साथ समन्वय बनाए रखे।
- विशेष बैठकें आयोजित करे जिनमें बच्चों की पढ़ाई की स्थिति पर चर्चा हो।
- बाल स्वराज समूह को सक्रिय रखे और बच्चों को अपनी बात रखने का अवसर दे।
- सुरक्षा के क्षेत्र में भूमिका
- यह सुनिश्चित करे कि कोई बच्चा मजदूरी में न जाए।
- बाल विवाह की सूचना मिलने पर तुरंत समुदाय को जागरूक करे।
- जरूरत पड़ने पर संबंधित विभागों से संपर्क बनाए।
- बच्चों की सुरक्षा और सम्मान को प्राथमिकता दे।
- आजीविका और जागरूकता में भूमिका
- गाँव में उपलब्ध सरकारी योजनाओं की जानकारी समुदाय तक पहुँचाए।
- स्थानीय रोजगार के अवसर बढ़ाने के प्रयासों का समर्थन करे।
- ग्राम सभा में बच्चों के मुद्दों को प्रमुखता से उठाए।

बाल स्वराज समूह और ग्राम स्वराज समूह का संयुक्त योगदान–

बाल स्वराज समूह बच्चों की आवाज उठाए। ग्राम स्वराज समूह उस आवाज को दिशा दे और समर्थन करे। बच्चे अपनी समस्या खुलकर रखें।बड़े ध्यान से सुनें और समाधान की दिशा में कदम उठाएँ। दोनों मिलकर यह सुनिश्चित करें कि –

1. कोई बच्चा शिक्षा से दूर न रहे।
2. कोई बच्चा मजदूरी में न जाए।
3. कोई बाल विवाह न हो।
4. हर बच्चा सुरक्षित और आत्मविश्वासी बने।

समाधान–

पलायन की समस्या तुरंत समाप्त नहीं हो सकती क्योंकि यह रोजगार से जुड़ी है। लेकिन बच्चों का भविष्य सुरक्षित रखना हमारे हाथ में है। यदि पलायन अनिवार्य हो तो तैयारी के साथ किया जा सकता है। गाँव छोड़ने से पहले माता–पिता बच्चों के स्कूल और पंचायत को जानकारी दें। बच्चों के दस्तावेज सुरक्षित रखें और जहाँ संभव हो नई जगह पर अस्थायी रूप से भी पढ़ाई जारी रखने का प्रयास करें। यदि बच्चे गाँव में रह रहे हैं तो उनकी देखभाल जिम्मेदार व्यक्ति के पास सुनिश्चित की जाए और शिक्षक से नियमित संपर्क रखा जाए।

ग्राम पंचायत इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। पलायन करने वाले परिवारों की जानकारी रखकर यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि कोई बच्चा स्कूल से पूरी तरह न छूटे। स्कूल और आंगनवाड़ी मिलकर ऐसे बच्चों की पहचान करें जो बीच में पढ़ाई छोड़ चुके हैं और उन्हें फिर से जोड़ने का प्रयास करें। मनरेगा और अन्य सरकारी योजनाओं का सही क्रियान्वयन स्थानीय रोजगार के अवसर बढ़ा सकता है जिससे पलायन की आवश्यकता कम हो सकती है। वागड़ की सबसे बड़ी ताकत उसका सामूहिक जीवन है। यहाँ लोग मिलकर त्योहार मनाते हैं, खेतों में साथ काम करते हैं और दुख–सुख बाँटते हैं। इसी भावना को बच्चों के भविष्य के लिए भी अपनाने की जरूरत है। यदि गाँव मिलकर तय करे कि कोई बच्चा मजदूरी में नहीं जाएगा, कोई बाल विवाह नहीं होगा और हर बच्चा स्कूल से जुड़ा रहेगा तो बड़ा बदलाव संभव है। बाल ग्राम सभा और बाल स्वराज समूह बच्चों को अपनी आवाज उठाने का मंच दे सकते हैं। जब बच्चे खुलकर अपनी बात रखते हैं और बड़े सम्मान से सुनते हैं तभी सच्चा समाधान निकलता है। हमें यह याद रखना होगा कि रोजगार की तलाश में घर कुछ समय के लिए छूट सकता है लेकिन बच्चों का बचपन और भविष्य नहीं छूटना चाहिए। सुरक्षित, शिक्षित और आत्मविश्वासी बच्चे ही वागड़ का भविष्य हैं। जब हर पंचायत, हर परिवार और हर नागरिक यह संकल्प ले कि बच्चों के अधिकार सबसे पहले हैं तब ही सशक्त वागड़ का निर्माण होगा।

सामूहिक संदेश

"पलायन मजबूरी हो सकता है, लेकिन बच्चों का भविष्य हमारी जिम्मेदारी है। आओ मिलकर ऐसा वागड़ बनाएं, जहाँ कोई भी बचपन अधूरा न रहे।"

''बबूल - किसान का साथी, प्रकृति का प्रहरी''

स्वतः उगने वाला जीवनदायी जंगल

जिस पेड़ को लगाना ना पड़े और वह अपने आप धीरे–धीरे घने जंगल में बदल जाए तो उसे क्या बेकार कहेंगे? देश के अनेक क्षेत्र इस तथा कथित बेकार पेड़ से भरे पड़े हैं और यह स्वनिर्मित जंगल तरह–तरह के जीव–जंतुओं, विशेषकर पशु–पक्षियों के घर है। शहरों से लगभग गायब हो चुकी गोरैया का यह सुरक्षित ठिकाना है। आज भी गौरैया के बड़े–बड़े झुंड इन कटीले पेड़ों पर बसेरा करते हैं और अपने आप को शिकारियों से सुरक्षित पाते हैं। वागड़ की कई सड़कों के किनारे दोनों तरफ आज भी बबूल के सैकड़ों पेड़ लगे हुए हैं जो बरसात के मौसम में अपने सुंदर पीले फूलों के साथ रास्ता चलने वालों को शानदार नजारा दिखाते हैं।

अरावली का उपेक्षित लेकिन महत्वपूर्ण वृक्ष

कुछ लोगों की नजर में बबूल किसी काम के नहीं है, पर यह पेड़ अरावली पर्वत श्रृंखला की एक खास वनस्पति है। खैर और पीलू की तरह अरावली पर्वत श्रृंखला के उजाड़े जाने की महती देशव्यापी चर्चा के बीच आइए इस कांटेदार बबूल की चर्चा कर लें और देखें कि यह आम आदमी और किसानों के लिए कितना उपयोगी है।

टैनिन, गोंद और पारंपरिक उपयोगिता

सदियों से इसकी छाल और फलियां कपड़ा रंगने के लिए टैनिन उपलब्ध कराती हैं। इससे खाकी रंग के कपड़े भी रंगे जाते हैं। बबूल का गोंद औषधीय महत्व का होने के साथ ही केलीको प्रिंटिंग, डाईंग, कागज के निर्माण, माचिस, स्याही, पेंट और खट्टी–मीठी गोलियों के निर्माण में उपयोग होता है। इसकी नर्म नाजुक शाखाएं टूथब्रश और मंजन दोनों का कार्य कर मसूड़े की कसावट भी बढ़ाते हैं। इसकी फलियों को आज भी पशुधन–खाद्य सामग्री बनाने के लिए उपयोग किया जाता है

ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार : लकड़ी और रोजगार

कभी, कहीं वृक्षारोपण करना हो तो बबूल का नंबर सबसे अंत में आता है। वजह है, बबूल से जुड़ी उसके नकारा होने की अफवाहें। लेकिन क्या बबूल, सु–बबूल हुए बिना सचमुच एक है। बबूल, जिसे कांटों के नाम पर बेकार का पौधा होता है?

इसकी फलियों को एकत्रित कर बाहर भेजा जाता है। यह एक घरेलू रोजगार का सुलभ साधन है। इसकी लकड़ी सागौन से ज्यादा मजबूत है और बड़े पैमाने पर पटिए बनाने के काम में आती है। इससे बढ़िया किस्म का चारकोल मिलता है। यह लकड़ी बैलगाड़ी के पहिए, हल, बक्खर और खेती के कई उपकरण बनाने के काम में आती है, उसका उपयोग आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में खेतों को नुकसान पहुंचाने वाले पशुओं से बचाने के लिए बागड़ की तरह किया जाता है। पलाश के पत्तों से बने पत्तल–दोनों को आपस में जोड़ने के लिए बबूल के बड़े–बड़े कांटे सुई और धागा दोनों का काम एक साथ करते हैं।

मृदा उर्वरता और पर्यावरण संरक्षण में भूमिका

बबूल का पेड़ मटर कुल का है यानि इसकी जड़ों पर जड़ ग्रंथियां पाई जाती हैं जिनमें उपस्थित सहजीवी बैक्टीरिया हवा की नाइट्रोजन को उपयोगी रूप में बदल देते हैं जो जमीन के लिए यूरिया का काम करती है। आसपास की मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाकर उसे उपजाऊ बनाती है। गहरी जड़ें मरुस्थल का विस्तार रोकती हैं। राजस्थान, मालवा, हरियाणा सब जगह जल और वायु के संरक्षण में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। राजस्थान, गुजरात से लगे क्षेत्रों के पर्यावरण का यह एक महत्वपूर्ण पेड़ है।

खेत की मेड़ से सांस्कृतिक सौंदर्य तक

यह भारतीय पेड़ों में बहुत ही खास महत्व का है। इसे खेतों की मेड़ पर लगाया जाता है। बबूल एक मध्यम आकार का कांटेदार पेड़ है जिसका वितान पंखदार होता है, छाल काली। पंखनुमा हरे पत्तों से बरसात में गहरे पीले, छोटी–छोटी गोल गेंद जैसे फूलों से लदा यह पेड़ अपने आप में एक आकर्षण पैदा करता है। इसकी फलियां नेकलेस की तरह मोतियों वाली होती है जिन्हें कभी ग्रामीण युवतियां पांव में पैजनियों की तरह और कान में बुंदों की तरह लटकाती थीं।

परागण, चारा और पारिस्थितिक संतुलन

रंगीन फूल पुंकेसरों के कारण सुगंधित होते हैं। इसकी पत्तियां ऊंटों, बकरियों और भेड़ों का प्रिय चारा है जो इसके बीजों को बिखेरने और दूर–दूर तक फैलाने में मददगार हैं। इसके पीले फूलों पर कई परागणकर्ता, जैसे–मधुमक्खियां और तितलियों का आना–जाना लगा रहता है। यह फूल उन्हें मीठा नेक्टर उपलब्ध कराते हैं जिनसे उनकी आबादी बनी रहती है। इसके पेड़ मिट्टी के कटाव को रोकते हैं और उसकी गुणवत्ता सुधारते हैं। इसकी पत्तियों में नाइट्रोजन 12– 18 प्रतिशत तक पाई गई है। शुष्क भूमि के लिए फिर से बहाली में मदद करता है। भले ही इस पेड़ को उपेक्षित माना गया हो, पर यह बहुत महत्वपूर्ण और काम का है। इतने महत्वपूर्ण सांस्कृतिक, ऐतिहासिक पेड़ को बेकार करार देने से पहले जरा सोच लेना चाहिए। उसके बारे में कोई अंतिम राय नहीं बनानी चाहिए। अंत में भविष्य में यही बात होगी कि काटे पेड़ बबूल का, तो सुख कहां से होय।

मौसमी परिवर्तन और बच्चों का स्वास्थ्य

फरवरी–मार्च का महीना सर्दी से गर्मी की ओर संक्रमण का समय होता है। यह परिवर्तन केवल तापमान में बदलाव नहीं, बल्कि शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली, पाचन तंत्र और श्वसन तंत्र पर भी प्रभाव डालता है। हमारे क्षेत्र जैसे बांसवाड़ा, डूंगरपुर, प्रतापगढ़, रतलाम, झाबुआ और दाहोद में यह बदलाव विशेष रूप से स्पष्ट होता है। दिन में तेज धूप और रात में हल्की ठंड, धूलभरी हवाएँ, जल स्रोतों में कमी और खुले वातावरण में जीवन ये सभी परिस्थितियाँ बच्चों को मौसम के प्रति अधिक संवेदनशील बनाती हैं। 0 से 5 साल के बच्चों का शरीर अभी पूर्ण रूप से विकसित नहीं होता, इसलिए तापमान के उतार–चढ़ाव से उनका शरीर जल्दी प्रभावित होता है। यदि इस समय संतुलित पोषण, पर्याप्त तरल पदार्थ और स्वच्छता पर ध्यान न दिया जाए, तो सामान्य अस्वस्थता भी गंभीर बीमारी का रूप ले सकती है। इसलिए मार्च का महीना विशेष सावधानी और जागरूकता का समय है।

मुख्य बीमारियाँ, कारण, लक्षण और प्रभाव –

मौसम बदलने के दौरान सबसे अधिक देखने वाली समस्याओं में सर्दी–खांसी, बुखार, गले का संक्रमण, डायरिया (दस्त), उल्टी, त्वचा पर चकत्ते और एलर्जी शामिल हैं। तापमान में बदलाव के कारण शरीर की प्रतिरोधक क्षमता अस्थायी रूप से कमजोर पड़ सकती है, जिससे वायरस और बैक्टीरिया जल्दी हमला करते हैं।

डायरिया इस मौसम की प्रमुख समस्या है, जो अक्सर असुरक्षित पानी और स्वच्छता की कमी के कारण फैलता है। लगातार दस्त होने से बच्चे के शरीर में पानी और आवश्यक लवण की कमी हो जाती है, जिससे कमजोरी, चक्कर और गंभीर स्थिति में जान का खतरा भी हो सकता है।

सर्दी–खांसी और बुखार आम लक्षण हैं, परंतु यदि सांस लेने में कठिनाई, तेज बुखार या अत्यधिक सुस्ती दिखाई दे, तो तुरंत स्वास्थ्य केंद्र जाना चाहिए। बार–बार बीमार पड़ने से बच्चे का वजन घट सकता है और कुपोषण की स्थिति उत्पन्न हो सकती है, जो उसके शारीरिक और मानसिक विकास को प्रभावित करती है। बचाव के परम्परागत उपाय, स्थानीय ज्ञान की शक्ति हमारे समाज की परंपराओं में मौसम के अनुसार जीवनचर्या बदलने की समझ रही है। स्थानीय खाद्य पदार्थ जैसे मक्का, ज्वार, बाजरा, रागी, कोदो–कुटकी और दालें

शरीर को ऊर्जा और पोषण प्रदान करते हैं। अंकुरित मूंग और चना शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं।

सर्दी–खांसी की स्थिति में तुलसी, अदरक और काली मिर्च का काढ़ा लाभकारी माना जाता है। हल्दी दूध शरीर को संक्रमण से लड़ने में सहायता करता है। डायरिया की स्थिति में चावल का माड़, दही–चावल और मूंग की पतली खिचड़ी पाचन को संतुलित रखते हैं। गर्मी की शुरुआत में सत्तू, छाछ और फलो का शरबत जैसे पारंपरिक पेय शरीर को ठंडक और ऊर्जा प्रदान करते हैं। ये उपाय सरल, सुलभ और स्थानीय संसाधनों पर आधारित हैं। हालाँकि, यह ध्यान रखना आवश्यक है कि यदि बीमारी गंभीर हो, तो केवल घरेलू उपायों पर निर्भर न रहें, बल्कि तुरंत स्वास्थ्य सेवाओं का उपयोग करें।

परिवार की भूमिका, पहली जिम्मेदारी – बच्चों के स्वास्थ्य की पहली और सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी परिवार की होती है। माता–पिता को मौसम परिवर्तन के संकेत समझने चाहिए और बच्चों के खान–पान तथा पहनावे में आवश्यक बदलाव करने चाहिए।

- बच्चों को हल्का, सुपाच्य और पौष्टिक भोजन देना चाहिए। उबला या साफ पानी देना आवश्यक है। शौच के बाद और भोजन से पहले हाथ धोने की आदत सिखानी चाहिए।
- गर्भवती और स्तनपान कराने वाली महिलाओं का पोषण भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। माँ का पहला दूध बच्चे के लिए प्राकृतिक सुरक्षा कवच है, जो उसे संक्रमण से बचाता है।
- यदि बच्चा बीमार हो, तो लक्षणों को अनदेखा न करें। समय पर उपचार और सही देखभाल से गंभीर स्थिति से बचा जा सकता है।

समुदाय एवं संगठनों की भूमिका, सामूहिक प्रयास का महत्व – बच्चों का स्वास्थ्य केवल परिवार की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि पूरे समुदाय का दायित्व है।

- आँगनवाड़ी केंद्र, आशा कार्यकर्ता और ग्राम स्वास्थ्य समितियाँ बच्चों की नियमित निगरानी, टीकाकरण और पोषण परामर्श में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।
- ग्राम स्वराज समूह, सक्षम समूह और सामुदायिक बैठकों में मौसमी बीमारियों पर संवाद और जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए। स्वच्छता अभियान, सुरक्षित जल स्रोतों की देखभाल और रसोई बाड़ी को बढ़ावा देना सामूहिक प्रयास का हिस्सा होना चाहिए।
- स्थानीय संगठन और स्वयंसेवी संस्थाएँ प्रशिक्षण, पोषण शिक्षा और व्यवहार परिवर्तन कार्यक्रमों के माध्यम से परिवारों को सशक्त बना सकती हैं।

सजगता ही सुरक्षा है – मार्च का मौसम चेतावनी भी है और अवसर भी। यदि हम समय रहते सावधानी बरतें, स्थानीय परंपरागत ज्ञान को अपनाएँ और वैज्ञानिक सलाह का पालन करें, तो बच्चों को मौसमी बीमारियों से सुरक्षित रखा जा सकता है। आदिवासी क्षेत्रों की सामुदायिक एकता और पारंपरिक ज्ञान हमारी सबसे बड़ी ताकत है। परिवार, समुदाय और संगठनों के सामूहिक प्रयास से ही हम अपने बच्चों के स्वस्थ और सशक्त भविष्य की नींव रख सकते हैं। स्वस्थ बच्चा ही स्वस्थ समाज का आधार है–इसलिए बदलते मौसम में सजग रहें, पोषण और स्वच्छता को प्राथमिकता दें, और मिलकर आने वाली पीढ़ी को सुरक्षित और मजबूत बनाएं।

बायोगैस : स्वच्छ व सस्ती रसोई का सरल उपाय

आदिवासी क्षेत्रों में आज भी अधिकतर परिवार खाना पकाने के लिए लकड़ी पर निर्भर हैं। यह व्यवस्था वर्षों से चली आ रही है, लेकिन आज इसके दुष्परिणाम साफ दिखाई दे रहे हैं। महिलाओं को रोज जंगल जाना पड़ता है, धुएँ से भरी रसोई में खाना बनाना पड़ता है और धीरे–धीरे इसका असर पूरे परिवार के स्वास्थ्य पर पड़ता है।

इसके साथ–साथ जंगलों पर दबाव बढ़ रहा है। जलवायु परिवर्तन के कारण कई इलाकों में सूखा, कम वर्षा और वन क्षेत्र में कमी देखने को मिल रही है। ऐसे में स्वच्छ और स्थानीय स्तर पर उपलब्ध ऊर्जा स्रोत अपनाना समय की आवश्यकता बन गया है। बायोगैस ऐसी ही एक तकनीक है, जो गोबर और जैविक कचरे से गैस बनाकर घरों तक स्वच्छ ईंधन पहुँचाती है।

लकड़ी पर निर्भरता से जुड़ी समस्याएँ

- धुएँ से खाँसी, आँखों में जलन और साँस की परेशानी
- महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य पर बुरा असर
- लकड़ी इकट्ठा करने में रोज कई घंटे खर्च
- जंगलों की कटाई और पर्यावरण को नुकसान

कई गाँवों में महिलाएँ बताती हैं कि पहले जहाँ पास के जंगल से लकड़ी मिल जाती थी, अब उन्हें दूर जाना पड़ता है। यह स्थिति भविष्य के लिए चिंता का विषय है।

बायो गैस क्या है और कैसे काम करता है?

बायोगैस प्लांट एक ऐसी संरचना होती है जिसमें–

- गोबर और रसोई का जैविक कचरा
- पानी के साथ मिलाकर
- एक बंद टंकी में डाला जाता है।

कुछ दिनों में इससे गैस बनती है, जो पाइप से सीधे चूल्हे तक जाती है। जो पदार्थ बचता है उसे स्लरी कहते हैं, जो खेतों के लिए बहुत अच्छी जैविक खाद है।

लकड़ी आधारित चूल्हा और बायो गैस चूल्हा एक तुलना

बायोगैस अपनाने से परिवार को क्या लाभ?

क्र.सं.	बिन्दु	लकड़ी आधारित चूल्हा	बायोगैस चूल्हा
1	ईंधन स्त्रोत	जंगल की लकड़ी	गोबर, जैविक कचरा
2	धुआँ	बहुत अधिक	लगभग नहीं
3	स्वास्थ्य असर	नकारात्मक	बेहतर
4	महिलाओं का श्रम	अधिक	कम
5	अतिरिक्त लाभ	कोई नहीं	जैविक खाद

- रसोई में धुआँ नहीं रहता
- खाना जल्दी पकता है।
- महिलाओं का समय बचता है।
- बच्चों और बुजुर्गों का स्वास्थ्य बेहतर रहता है।
- लकड़ी और एलपीजी पर खर्च घटता है।

कई परिवार बताते हैं कि बायोगैस अपनाने के बाद उनकी दिनचर्या आसान हो गई है।

खेती के लिए स्लरी का उपयोग

- बायोगैस प्लांट से निकलने वाली स्लरी।
- मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती है।
- रासायनिक खाद की जरूरत घटाती है।
- फसल की पैदावार बढ़ाने में मदद करती है।
- मिट्टी में नमी बनाए रखने में सहायक होती है।

इससे खेती अधिक टिकाऊ बनती है।

किस परिवार के लिए कौनसा प्लांट उपयुक्त
सामुदायिक स्तर पर बायोगैस के अवसर

क्र.सं.	पशुओं की संख्या	उपयुक्त प्लांट क्षमता	उपयोग
1	1–2 पशु	1 घन मीटर	आंशिक खाना पकाना
2	2–3 पशु	2 घन मीटर	पूरा घरेलु खाना
3	4–6 पशु	3–4 घन मीटर	घरेलु अतिरिक्त उपयोग+

- आंगनवाड़ी केंद्र
- छात्रावास
- सामुदायिक रसोई
- स्वयं सहायता समूहों द्वारा संचालित रसोई

बड़े प्लांट से कई परिवारों को एक साथ लाभ मिल सकता है।

स्थानीय रोजगार और कौशल विकास

- युवाओं को बायोगैस प्लांट निर्माण का प्रशिक्षण
- मरम्मत एवं रखरखाव का काम
- सामग्री आपूर्ति से आय

इससे गाँव के भीतर रोजगार के अवसर बनते हैं।

आगे की राह

यदि पंचायत, स्वयं सहायता समूह और ग्राम संगठन मिलकर बायोगैस को बढ़ावा दें, तो अधिक परिवार स्वच्छ रसोई अपना सकते हैं। इसके लिए –

- जागरूकता बैठकों का आयोजन करना।
- सरकारी योजनाओं से जोड़ना
- स्थानीय तकनीशियन तैयार करना जरूरी है।

निष्कर्ष

बायोगैस आदिवासी क्षेत्रों के लिए केवल ऊर्जा समाधान नहीं, बल्कि स्वास्थ्य सुधार, जंगल संरक्षण और आजीविका सशक्तिकरण का माध्यम है।

सहजन /सरगुआ /हरगुआ एक चमत्कारी वृक्ष

सहजन (Moringa oleifera), जिसे अक्सर ''चमत्कारी वृक्ष'' कहा जाता है, न केवल स्वास्थ्य के लिए बल्कि पर्यावरण के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह पौधा जलवायु परिवर्तन से लड़ने और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में बड़ी भूमिका निभाता है। यह एक अत्यधिक पौष्टिक और बहुउद्देशीय सदाबहार वृक्ष है, जिसके पत्ते, फली, फूल, जड़ और छाल सभी औषधीय और खाद्य गुणों से भरपूर हैं। इसे सुपरफूड कहा जाता है क्योंकि इसमें संतरे से 7 गुना अधिक विटामिन सी और दूध से 4 गुना अधिक कैल्शियम होता है। यह सूखा–प्रतिरोधी पौधा है, जो कम पानी में उगता है और 300 से अधिक बीमारियों के उपचार में सहायक है।

सहजन के प्रमुख उपयोग और लाभ :–

पौष्टिक आहार : फलियां, पत्तियां और फूल का उपयोग सब्जी, सूप, सलाद और कड़ी के रूप में किया जाता है।

पानी की शुद्धि : सहजन के बीजों में पानी को स्वच्छ और कीटाणु रहित करने का गुण होता है।

कम लागत में आय : यह बिना किसी विशेष देखभाल या कीटनाशक के आसानी से उगाया जा सकता है, जो किसानों के लिए आय का एक स्थायी साधन है।

सौंदर्य और अन्य उपयोग : इसका तेल त्वचा और बालों के लिए फायदेमंद है, और इसके पौधे से गोंद भी प्राप्त होता है।

औषधीय गुण : पत्तियों का पाउडर कुपोषण दूर करने, खून की कमी को पूरा करने और जोड़ों के दर्द, हृदय, मधुमेह व पाचन को बेहतर बनाने में सहायक है।

क्र.सं.	सहजन के पेड़ के विभिन्न भाग	औषधीय गतिविधियां
1	बीज	पीड़ानाशक, एलर्जी नाशक, जीवाणु रोधी, मूत्रवर्धक औषधि, विषाणुरोधी।
2	बीज कर्नल	दमा रोधी, जलन या प्रदाहात्मक रोधी।
3	फली एवं बीज	रक्तचाप
4	पत्ती	अल्सर रोधी, अतिगलग्रन्थिता, फंगस रोधी, मधुमेह विरोधी, पोषण का प्रतिरोधक, हाइपोलिपिडेमिक आदि।
5	जड़	कैंसर रोधी, प्रदाहक रोधी, पीड़ा नाशक।
6	फूल	प्रतिवातौषधि, कैंसर रोधी।
7	छाल	पीड़ानाशक, जर्म नाशक।
8	फोलियस	दूध बढ़ाने वाला।

सहजन को कुपोषण मुक्त भारत के लिए एक महत्वपूर्ण फसल माना जाता है।

सहजन के विभिन्न भागों के औषधीय गुण

- सहजन अत्यन्त गुणकारी और पोषक तत्वों से भरपूर होने के कारण सुपर फूड के नाम से भी जाना जाता है।
- सहजन की पत्तियां, फूल और बीजों में काफी मात्रा में एन्टीआक्सीडेण्ट्स होते हैं यह एन्टीआक्सीडेण्ट्स शरीर में रेडियोएक्टिवता कम कर कैंसर और आर्थराइटिस जैसी गम्भीर बीमारियों से बचाव करते हैं।
- सहजन की पत्तियों में कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन, कैल्शियम, पोटैशियम, आयरन, मैग्नीशियम, विटामिन्स आदि प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं।

औषधीय गुण

बीज – (नेचुरल क्लीनिंग एजेण्ट)

सहजन के बीज से पानी को काफी हद तक शुद्ध करके पेयजल के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसके बीज को पाउडर के रूप में पीस कर पानी में मिलाया जाता है। पानी के साथ घुलकर यह एक प्रभावी नेचुरल क्लोरीफिकेशन एजेण्ट बन जाता है। यह न सिर्फ पानी को बैक्टीरिया रहित करता है बल्कि पानी की सान्द्रता को भी बढ़ाता है जिससे जीव वैज्ञानिक के नजरिये से यह जल मानवीय उपयोग के लिए अधिक योग्य बन जाता है।

पत्तियां:–

- सहजन की पत्तियों में कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन, ऑयरन, कैल्शियम, पोटेशियम, मैंग्नीशियम, विटीमिन ए, सी और बी काम्प्लेक्स प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जो खून की कमी एवं कुपोषण दूर करने में सहायक है। इसके अलावा सहजन/सरगुआ/हरगुआ के बीज के आटे को बच्चों में कुपोषण दूर करने के लिए भी प्रयोग में लाया जा सकता है। यह एक अच्छा हेल्थ सप्लीमेण्ट है।
- सहजन में शुगर के स्तर को बैलेंस रखने की क्षमता होती है। यह डाइबिटीज से लड़ने में मदद करता है।
- उपापचय (मेटाबोलिज्म) को ठीक रखने के लिए सहजन के तत्वों का सेवन बेहतर माना गया है। यह पाचन क्रिया को सही रखने में मददगार है।
- सहजन की पत्तियों का काढ़ा, गठिया, सियाटिका, पक्षाघात, वायु विकार में शीघ्र लाभ देता है।
- मोच आने पर सहजन की पत्ती की लुग्दी बनाकर उसमें थोड़ा सा सरसों का तेल डालकर आंच पर पकायें और फिर मोच के स्थान पर लगाने से शीघ्र ही लाभ होता है।
- सहजन के पत्तों का रस बच्चों के पेट के कीड़े निकालने एवं उलटी दस्त रोकने के काम आता है।
- सहजन की पत्तियों को पीसकर लगाने से घाव एवं सूजन ठीक हो जाता है।
- सहजन की पत्तियों के रस से उच्च रक्तचाप में लाभ होता है।
- सहजन विटामिन ए का बेहतरीन स्रोत है। यह आँख को स्वस्थ रखता है।
- सहजन की छाल में शहद मिलाकर पीने से वात व कफ शान्त हो जाता है।
- सहजन की छाल के काढ़े से कुल्ला करने पर दांतों के कीड़े नष्ट होते हैं और दर्द में आराम मिलता है।
- सहजन के पेड़ की छाल का प्रयोग गोंद बनाने में किया जाता है।

जड़ :–

- जड़ का काढ़ा सेंधा नमक व हींग के साथ पीने से मिर्गी के दौरों में लाभ होता है।
- सहजन की छाल का काढ़ा, हींग व सेंधा नमक डालकर पीने से पित्ताशय की पथरी में लाभ होता है।
- सहजन के ताजे फूलों का प्रयोग हर्बल टॉनिक बनाने में किया जाता है।
- सहजन के फूल, हृदय रोगों व कफ रोगों में उपयोगी है।

फलियाँ :–

- सहजन की सब्जी खाने से पुराने गठिया, जोड़ों का दर्द, वायु संचार, वात रोगों में लाभ होता है।
- सहजन की सब्जी खाने से गुर्दे और मुत्राशय की पथरी कटकर निकल जाती है।

सहजन का प्रसंस्करण :–

सहजन की पत्तियों में आयरन, रेशा, विटामिन ए एवं प्रोटीन प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। अतः पत्ती को सुखाने के उपरान्त पाउडर बनाकर उसे फलों एवं सब्जियों के पौष्टिक जूस बनाना।

- सहजन की पत्तियों एवं फलियों के सत् को निकालकर विभिन्न फलों में मिलाकर उत्पाद बनाना।

अतः सहजन एक ऐसा महत्वपूर्ण पेड़ है जो बेजोड़ पोषक तत्वों से भरपूर है। इसमें प्रचुर मात्रा में कैल्शियम और प्रोटीन पाया जाता है। इसमें दूध की तुलना में चार गुना कैल्शियम और दुगना प्रोटीन होता है। प्राकृतिक रूप से इसमें मौजूद मैंग्नीशियम, शरीर में कैल्शियम को आसानी से पचाने में मदद करता है। इसमें पाया जाने वाला जिंक, खून की कमी पूरी करने में सहायक है। सहजन में ओलिकऐसिड, जोकि एक प्रकार मोनोसैचुरेटेड फैट है, अधिक मात्रा में पाया जाता है जोकि शरीर के लिए अति आवश्यक है। सहजन में अधिक मात्रा में कैल्शियम होने के कारण यह हड्डियों को मजबूती प्रदान करने में सहायक है। इसमें पाया जाने वाला विटामिन सी, शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाकर रोगों से लड़ने की शक्ति प्रदान करता है। सहजन मानव जीवन के लिए प्रकृति का वरदान है। क्योंकि इसमें कुपोषण दूर करने की अद्भुत क्षमता पायी जाती है। अतः सहजन की खेती के लिए किसान भाइयों को प्रेरित करना चाहिए क्योंकि सहजन बिना ज्यादा लागत एवं मेहनत के आय का एक बहुत बड़ा साधन हो सकता है।

सहजन के पौधे के प्रमुख पर्यावरणीय लाभ :–

सूखा–प्रतिरोधी और टिकाऊ : यह कम पानी में उगता है और शुष्क क्षेत्रों में भी हरा–भरा रहता है, जिससे यह जल–संरक्षण अनुकूल है।

मिट्टी की उर्वरता में सुधार : इसके पौधे नाइट्रोजन स्थिरीकरण (**Nitrogen fixation**) के माध्यम से मिट्टी को समृद्ध और उपजाऊ बनाते हैं, जिससे कृत्रिम उर्वरकों की आवश्यकता कम होती है।

प्राकृतिक जल शोधक : सहजन के बीजों का उपयोग पानी को साफ करने के लिए एक प्रभावी, प्राकृतिक क्लोरीफिकेशन एजेंट (**Natural Clarification Agent**) के रूप में किया जाता है, जो पानी में मौजूद कीटाणुओं को नष्ट करते हैं।

तेजी से वृद्धि : यह पौधा बहुत तेजी से बढ़ता है और पर्यावरण में कार्बन को सोखने (**Carbon Sequestration**) में मदद करता है।

कृषि–वानिकी के लिए उपयुक्त : इसके पेड़ बहुत अधिक छाया नहीं देते, जिससे अन्य फसलों के साथ इन्हें लगाना (सीमावर्ती वृक्षारोपण) फायदेमंद होता है।

पशु चारा और जैव–ईंधन : इसकी पत्तियों और टहनियों का उपयोग पौष्टिक पशु चारे के रूप में किया जाता है, और यह जैव–ईंधन का भी एक अच्छा स्त्रोत है।

सहजन का पौधा पर्यावरणीय स्थिरता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह एक सूखा–प्रतिरोधी, तेजी से बढ़ने वाला पौधा है जो नाइट्रोजन स्थिरीकरण से मिट्टी की उर्वरता बढ़ाता है। इसके बीज प्राकृतिक जल शोधक हैं, जो पानी को शुद्ध कर सकते हैं। यह एक बहुउद्देशीय पेड़ है जो छाया, पशु चारा, और कृषि–वानिकी में सहायक है।

मुर्गियों में सही पोषण से बढ़ाएं अण्डा उत्पादन

वागड़ क्षेत्र में कई किसान खेती के साथ मुर्गीपालन भी कर रहे हैं। देसी मुर्गी को अगर सही देखभाल और सही दाना मिले तो अण्डा उत्पादन अच्छा होता है। लेकिन कई बार मुर्गियाँ कमजोर पड़ जाती हैं, अण्डा कम देने लगती हैं या अचानक मर भी जाती हैं। इसका बड़ा कारण पोषण की कमी या दाने का असंतुलन भी होता है। मुर्गियों के शरीर को मजबूत रखने और ज्यादा अण्डा उत्पादन के लिए संतुलित आहार बहुत जरूरी है। अगर दाने में कैल्शियम, फास्फोरस, विटामिन और ऊर्जा सही मात्रा में नहीं होगी तो कई बीमारियाँ पैदा हो सकती हैं।

रिकेट्स रोग—हड्डियाँ कमजोर होने की बीमारी कई बार देखा जाता है कि मुर्गियाँ ठीक से खड़ी नहीं हो पातीं, उनके पैर टेढ़े हो जाते हैं या वे लंगड़ाने लगती हैं। यह स्थिति अक्सर कैल्शियम, फास्फोरस या विटामिन डी3 की कमी से होती है। इस बीमारी को रिकेट्स कहते हैं।मुर्गी जब अण्डा देती है तो उसके शरीर से काफी कैल्शियम निकलता है। अगर दाने में पर्याप्त कैल्शियम नहीं होगा तो शरीर की हड्डियाँ कमजोर होने लगती हैं। हड्डियाँ नरम और टेढ़ी हो जाती हैं। मुर्गी बैठी रहती है, चलने में दिक्कत होती है और धीरे–धीरे उत्पादन घट सकता है।कैल्शियम और फास्फोरस का अनुपात सही होना चाहिए। सामान्य तौर पर दाने में कैल्शियम और फास्फोरस का अनुपात लगभग 2–1 होना चाहिए। विटामिन डी3 जो सूर्य की धुप से आसानी से मिल जाता है बहुत जरूरी है क्योंकि यह कैल्शियम को शरीर में सोखने में मदद करता है। अगर विटामिन डी–3 की कमी होगी तो कैल्शियम खिलाने के बाद भी पूरा फायदा नहीं मिलेगा।

कभी–कभी खराब या सीलन वाला दाना खिलाने से भी समस्या होती है। फफूंद लगा दाना "जहर" जैसा काम करता है। इसे माइकोटॉक्सिन कहते हैं। ऐसा दाना खाने से मुर्गियों के शरीर में पोषक तत्वों का अवशोषण कम हो जाता है और हड्डियाँ कमजोर पड़ जाती हैं। इससे बचाव के लिए दाना हमेशा सूखा और साफ रखें। अगर दाना खराब लगे तो तुरंत बदल दें। जरूरत पड़े तो डॉक्टर की सलाह से विटामिन डी3 की मात्रा कुछ समय के लिए दें। पिंजरा लेयर थकान–ज्यादा अण्डा देने वाली मुर्गियों में कमजोरी, जो मुर्गियाँ पिंजरे में रखी जाती हैं और लगातार ज्यादा अण्डा देती हैं, उनमें कभी–कभी "लेयर थकान" नाम की समस्या हो जाती है। यह भी कैल्शियम की कमी से जुड़ी बीमारी है। जब मुर्गी लगातार अण्डा देती है तो शरीर से बहुत कैल्शियम निकलता है। अगर पूर्ति सही ढंग से नहीं होगी तो हड्डियाँ भुरभुरी हो जाती हैं।ऐसी मुर्गियाँ अचानक अपने पैरों पर खड़ी नहीं हो पातीं। वे गिर

जाती हैं और उठने में दिक्कत होती है। कई बार अण्डा उत्पादन ठीक रहता है लेकिन मुर्गी कमजोर हो जाती है।

पिंजरे में रहने वाली मुर्गियों को चलने–फिरने का मौका कम मिलता है। इसलिए उनकी हड्डियाँ और कमजोर हो जाती हैं। यदि संभव हो तो समय–समय पर मुर्गियों को खुला छोड़कर थोड़ी देर चलने दें। इससे व्यायाम होगा और हड्डियाँ मजबूत रहेंगी।मुर्गियों को नियमित रूप से कैल्शियम पाउडर या चूना पत्थर की महीन मात्रा दाने में मिलाकर देना चाहिए। इससे हड्डियों और अण्डे के छिलके दोनों मजबूत होते हैं। फैटी लिवर सिंड्रोम–ज्यादा मोटापा और जिगर की समस्या, कई बार मुर्गियाँ ज्यादा मोटी हो जाती हैं और अचानक मरने लगती हैं। अण्डा देने वाली मुर्गियों में "फैटी लिवर सिंड्रोम" एक गंभीर समस्या है। इसमें मुर्गी के जिगर में चर्बी ज्यादा जमा हो जाती है।जब मुर्गी को बहुत ज्यादा ऊर्जा वाला दाना (जैसे अधिक मक्का) खिलाया जाता है और वह कम चलती–फिरती है, तो शरीर में अतिरिक्त चर्बी जमा होने लगती है। धीरे–धीरे जिगर पर असर पड़ता है और मुर्गी कमजोर होकर मर भी सकती है।

इससे बचने के लिए दाने में संतुलन जरूरी है। केवल मक्का ज्यादा मात्रा में न दें। गेहूँ, जौ, चोकर, जई या अन्य अनाज मिलाकर संतुलित दाना बनाएं। दाने में प्रोटीन और खनिज भी सही मात्रा में हों। बहुत ज्यादा मोटी मुर्गियाँ ज्यादा दिन उत्पादन नहीं दे पातीं। मुर्गियों के शरीर के वजन पर नजर रखें। अगर वजन तेजी से बढ़ रहा है तो दाने की मात्रा और ऊर्जा कम करनी चाहिए।

संतुलित आहार जरूरी है— मुर्गियों में कई बीमारियाँ संक्रामक होती हैं, जो एक से दूसरी में फैलती हैं। लेकिन कई बीमारियाँ ऐसी भी हैं जो दाने की कमी या असंतुलन से होती हैं। अगर समय पर पहचान और इलाज न किया जाए तो पूरा झुंड प्रभावित हो सकता है।अण्डा देने वाली मुर्गियों का दाना पूरा और संतुलित होना चाहिए। इसमें ऊर्जा, प्रोटीन, कैल्शियम, फास्फोरस, विटामिन और खनिज सब सही मात्रा में हों। खासकर उत्पादन के समय पोषण की कमी नहीं होनी चाहिए। मुर्गियों को हमेशा साफ और सूखा दाना दें। दाने को नमी से बचाकर रखें। पानी ताजा और साफ होना चाहिए। दाने में समय–समय पर मिनरल मिक्स और विटामिन मिलाते रहें। कैल्शियम की कमी न होने दें। अगर अण्डे का छिलका पतला दिखे तो तुरंत कैल्शियम बढ़ाएँ। मुर्गियों को पूरी तरह बंद न रखें। यदि संभव हो तो उन्हें थोड़ी देर खुला घूमने दें। इससे उनका स्वास्थ्य अच्छा रहता है और उत्पादन भी बढ़ता है। रिकेट्स, लेयर थकान और फैटी लिवर जैसी समस्याएँ अधिकतर दाने के असंतुलन से जुड़ी होती हैं। इनसे बचाव का सबसे अच्छा तरीका है संतुलित और साफ आहार देना। अगर मुर्गी स्वस्थ रहेगी तो अण्डा उत्पादन भी ज्यादा होगा और किसान की आमदनी भी बढ़ेगी। सही पोषण ही सफल मुर्गीपालन की कुंजी है।

युवा स्वराज संवाद : आदिवासी समुदाय में परिवर्तन की नई दिशा

आदिवासी समाज में युवा केवल आयु का समूह नहीं, बल्कि परिवर्तन की जीवंत शक्ति हैं। आज का आदिवासी युवा मोबाइल फोन से दुनिया से जुड़ रहा है, कॉलेजों तक पहुँच बना रहा है, प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी कर रहा है और खेती, आजीविका व अधिकारों के प्रश्नों पर अधिक जागरूक हो रहा है। फिर भी एक मूल प्रश्न बना रहता है—क्या उसकी आवाज गाँव के निर्णयों में प्रभावी रूप से शामिल होती है?

अनुसूचित क्षेत्रों में ग्राम सभा को विशेष अधिकार प्राप्त हैं। विशेष रूप से पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम (**PESA**) और वन अधिकार अधिनियम (**FRA**) जैसे कानून यह सुनिश्चित करते हैं कि जल, जंगल और जमीन से जुड़े निर्णय सामूहिक सहमति से हों। बावजूद इसके, व्यवहार में युवा महिलाओं–की भागीदारी सीमित दिखाई देती है। यही वह स्थान है जहाँ **"युवा स्वराज संवाद"** जैसे सामुदायिक मॉडल की आवश्यकता सामने आती है।

संवाद क्यों आवश्यक है?

दक्षिणी राजस्थान और अन्य आदिवासी क्षेत्रों में युवाओं के सामने अनेक चुनौतियाँ हैं–मौसमी प्रवास, शिक्षा से टूटता जुड़ाव, बेरोजगारी, कौशल की कमी, बाल विवाह, नशे की बढ़ती प्रवृत्ति और वन–अधिकारों की सीमित समझ। इन समस्याओं का समाधान केवल योजनाओं से नहीं, बल्कि संगठित सामुदायिक चेतना से संभव है।

संवाद मॉडल युवाओं को संगठित होकर सोचने, तथ्य जुटाने, सामूहिक निर्णय लेने और जिम्मेदारी निभाने की प्रक्रिया से जोड़ता है। यह केवल बैठक नहीं, बल्कि लोकतांत्रिक अभ्यास है।

संवाद मॉडल के मूल तत्व

1. समान अवसर – हर युवा को अपनी बात रखने का अवसर।
2. सुरक्षित वातावरण – बिना डर या उपहास के संवाद।
3. साक्ष्य–आधारित चर्चा – निर्णय भावनाओं के साथ–साथ तथ्यों पर आधारित हों।
4. सामूहिक निर्णय – बहुमत या सहमति से निर्णय।
5. निरंतर समीक्षा – नियमित मूल्यांकन और सुधार।

कैसे काम करता है यह मॉडल?

गाँव स्तर पर 15–25 युवाओं का समूह, जिसमें कम से कम 50 प्रतिशत युवा महिलाएँ हों। प्रारंभिक चरण में विश्वास निर्माण के लिए अनौपचारिक बैठकें, सांस्कृतिक गतिविधियाँ और **"सखी संवाद"** जैसे सुरक्षित मंच तैयार किए जाते हैं।

इसके बाद युवा अपने गाँव की प्रमुख समस्याओं की पहचान करते हैं–जैसे प्रवास, बाल विवाह, विद्यालय से दूरी, नशा या जल संकट। केवल चर्चा ही नहीं, बल्कि तथ्य संग्रह भी किया जाता है–कितने युवा प्रवास करते हैं? कितनी लड़कियाँ दसवीं के बाद पढ़ाई छोड़ती हैं?

ग्राम सभा में युवाओं की उपस्थिति कितनी है?

तैयार विश्लेषण ग्राम सभा में प्रस्तुत किया जाता है और पंचायत से ठोस कार्य योजना व लिखित प्रतिबद्धता ली जाती है। इसके बाद समयबद्ध कार्ययोजना बनाई जाती है–कौन करेगा, कब तक करेगा और संसाधन कहाँ से आएँगे।

जेंडर–संवेदनशील दृष्टिकोण

यद्यपि आदिवासी समाज में अपेक्षाकृत बेहतर जेंडर संतुलन देखा जाता है, फिर भी निर्णय मंचों पर पुरुषों की संख्या अधिक रहती है। इसलिए युवतियों की भागीदारी सुनिश्चित करना आवश्यक है। जब लड़कियाँ सक्रिय रूप से बोलती हैं, तो स्वास्थ्य, शिक्षा, सुरक्षा और स्वच्छता जैसे मुद्दे केंद्र में आते हैं। यही वास्तविक स्वराज की दिशा है।

संभावित परिवर्तन

यदि यह मॉडल नियमित रूप से लागू हो, तो 1–3 वर्षों में उल्लेखनीय परिवर्तन संभव हैं–

- ग्राम सभा में युवाओं की सक्रिय उपस्थिति में वृद्धि
- बाल विवाह में कमी
- लड़कियों की शिक्षा निरंतरता में सुधार
- स्थानीय उद्यम और आजीविका पहल
- पंचायत बजट में युवा मुद्दों का समावेश

दीर्घकाल में यह मॉडल नेतृत्व क्षमता विकसित करता है, लोकतांत्रिक संस्कृति को मजबूत करता है और समुदाय को बाहरी निर्भरता से आत्मनिर्भरता की ओर ले जाता है।

निष्कर्ष

युवा स्वराज संवाद केवल एक कार्यक्रम नहीं, बल्कि सामुदायिक पुनर्जागरण की प्रक्रिया है। जब युवा संगठित होकर सम्मानपूर्वक, तथ्यों के साथ और सामूहिक जिम्मेदारी के भाव से आगे बढ़ते हैं, तो वे केवल समस्याओं पर चर्चा नहीं करते–वे अपने समुदाय के भविष्य की दिशा तय करते हैं। संवाद ही स्वराज की पहली सीढ़ी है।

वागड़ की आदिवासी होली और गैर नृत्य

दक्षिणी राजस्थान का वागड़ अंचल जहाँ आदिवासी संस्कृति आज भी जीवन की धुरी बनी हुई है। यहाँ बसने वाले भील समुदायों का जीवन जंगल, जल, भूमि, पशुधन और ऋतु चक्र से गहरे रूप में जुड़ा है। इसमें होली का त्योहार केवल सांस्कृतिक आयोजन नहीं बल्कि सामाजिक संरचना, कृषि प्रणाली, पारिस्थितिकी ज्ञान और सांस्कृतिक स्मृति का मिला–जुला रूप है। पारम्परिक होली और उससे जुड़ा गैर नृत्य इस क्षेत्र की जीवित सांस्कृतिक प्रणाली को समझने का महत्वपूर्ण माध्यम हैं। वागड़ क्षेत्र में होली का उत्सव प्राचीन काल से मनाया जाता रहा है, परंतु इसका स्वरूप मुख्यधारा के शहरी होली उत्सवों से भिन्न है। यहाँ होली का मूल संबंध आग, ऋतु परिवर्तन और कृषि चक्र से जुड़ा माना जाता है। स्थानीय परंपराओं में होलिका दहन को केवल ऐतिहासिक कथा से नहीं जोड़ा जाता, बल्कि इसे प्रकृति में पुनर्जन्म की शक्ति का प्रतीक माना जाता है।

आदिवासी लोक कथाओं में अग्नि को शुद्धिकरण की शक्ति माना गया है। इसलिए होली की अग्नि को गांव के रोग, विवाद और नकारात्मक शक्तियों को समाप्त करने वाला माध्यम माना जाता है। समुदाय सदस्य पुराने कृषि अवशेष या सूखी झाड़ियों को जलाकर यह संकेत देते हैं कि पुराना कृषि चक्र समाप्त हो रहा है और नया चक्र प्रारंभ होने वाला है। यह दृष्टिकोण आदिवासी ज्ञान

प्रणाली की पारिस्थितिक समझ को दर्शाता है, जहाँ आग को विनाश नहीं बल्कि पुनर्जीवन का प्रतीक माना जाता है। वागड़ का क्षेत्र वर्षा आधारित खेती पर निर्भर है। रबी की फसल पकने और गर्मी की शुरुआत के बीच का समय गाँवों में संक्रमण काल होता है। इसी समय होली का उत्सव मनाया जाता है। इस कारण यह पर्व कृषि–आर्थिक चक्र से सीधे जुड़ जाता है।गांवों में किसान होली की आग में गेहूँ की बालियाँ सेंक कर प्रसाद के रूप में बांटते हैं। यह केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं बल्कि प्रतीकात्मक रूप से यह घोषणा है कि फसल पक चुकी है और समुदाय को भोजन एवं पोषण विविधता की सुरक्षा प्राप्त हो चुकी है। इस प्रकार होली सामूहिक खाद्य सुरक्षा के उत्सव का भी रूप ले लेती है।

समुदाय और जंगल का संबंध

होली के दौरान जंगल से लकड़ी एकत्र करने की सामूहिक परंपरा समुदाय और जंगल के संबंध को भी दर्शाती है। परंपरागत रूप से लोग केवल सूखी लकड़ी ही लाते हैं, जिससे वन संरक्षण की एक अप्रत्यक्ष सामाजिक व्यवस्था बनती है। यह व्यवहार आदिवासी पारिस्थितिकी ज्ञान का उदाहरण है, जिसमें प्रकृति का उपयोग और संरक्षण साथ–साथ चलते हैं।

सामूहिक पहचान

आदिवासी समाज में होली सामूहिक पहचान का सबसे बड़ा मंच है। गांव के सभी परिवार इस आयोजन में सहभागी होते हैं। होलिका दहन के लिए स्थान का चयन, पूजा की सामग्री जुटाना, लकड़ी लाना, गीत गाना ये सभी कार्य सामूहिक रूप से किए जाते हैं। इस सामूहिक श्रम की प्रक्रिया सामाजिक संबंधों को मजबूत करती है। जिन परिवारों के बीच मतभेद होते हैं, वे भी इस दिन एक साथ बैठते हैं और सामुहिक भोजन बनाकर साथ में खाते हैं। इस प्रकार होली सामाजिक तनाव कम करने और सामाजिक संतुलन बनाए रखने का पारंपरिक तंत्र भी है।

सामूहिक स्मृति और सांस्कृतिक अनुशासन

वागड़ की होली का सबसे महत्वपूर्ण गैर नृत्य सामूहिक स्मृति और सांस्कृतिक अनुशासन का घटक है। यह नृत्य केवल मनोरंजन नहीं बल्कि सांस्कृतिक प्रशिक्षण, सामाजिक अनुशासन और ऐतिहासिक स्मृति का माध्यम है। गैर नृत्य की संरचना गोलाकार होती है, गोल घेरा समुदाय की समानता, एकता और निरंतरता को दर्शाता है। नृत्य की लय ढोल, कुण्डी, थाली और लय से नियंत्रित होती है, जिससे सामूहिक अनुशासन और तालमेल विकसित होता है। नृत्य में उपयोग होने वाली लकड़ी की छड़ियाँ केवल नृत्य उपकरण नहीं बल्कि समुदाय की सुरक्षा और वीरता की प्रतीकात्मक स्मृतियाँ हैं। कई लोकगीतों में पूर्वजों की वीरता, जंगलों की रक्षा और सामुदायिक संघर्षों का वर्णन मिलता है। इस प्रकार गैर नृत्य एक मौखिक इतिहास का माध्यम बन जाता है। गांवों में गैर नृत्य गाँव के देवी/देवता एवं पूर्वजों के स्थान से होते हुए निकलते है। यह नृत्य केवल सामाजिक गतिविधि नहीं बल्कि आध्यात्मिक अनुष्ठान भी है। लोग मानते हैं कि सामूहिक नृत्य से देवी–देवता एवं पूर्वज प्रसन्न होते हैं और गांव में समृद्धि आती है। यह विश्वास आदिवासी धर्म की उस अवधारणा को दर्शाता है जिसमें प्रकृति, देवता और समुदाय एक दूसरे से अलग नहीं बल्कि एक साथ जुड़े हुए माने जाते हैं। गैर नृत्य और होली की परंपराएँ नई पीढ़ी को संस्कृति सिखाने का जीवंत माध्यम हैं। बच्चे और युवा इस उत्सव के माध्यम से गीत, वेशभूषा, रीति–रिवाज और सामाजिक व्यवहार सीखते हैं।

यह सांस्कृतिक हस्तांतरण औपचारिक शिक्षा प्रणाली से अलग, अनुभव आधारित सामाजिक शिक्षा का उदाहरण है। इस दृष्टि से होली एक सांस्कृतिक विद्यालय का कार्य करती है, जहाँ बिना लिखित पाठयक्रम के पीढ़ियाँ अपनी पहचान सीखती हैं।पिछले कुछ दशकों में सड़क, शिक्षा, मीडिया और बाजार के विस्तार ने सामाजिक जीवन को प्रभावित किया है। गांवों में अब रंग–गुलाल, गीत का प्रभाव दिखाई देता है।यह स्थिति सांस्कृतिक अनुकूलन का उदाहरण है, जहाँ परंपरा और आधुनिकता का सह–अस्तित्व दिखाई देता है। पारम्परिक होली और गैर नृत्य केवल लोकउत्सव नहीं बल्कि सांस्कृतिक विरासत हैं। इन परंपराओं में पारिस्थितिकी ज्ञान, सामाजिक संगठन, मौखिक इतिहास और सामूहिक पहचान के तत्व निहित हैं। आज आवश्यकता है कि इन परंपराओं को दस्तावेजीकरण किया जाए, स्थानीय विद्यालयों में इनके बारे में पढ़ाया जाए और सांस्कृतिक कार्यक्रमों में इन्हें सम्मानपूर्वक प्रस्तुत किया जाए। संरक्षण का अर्थ केवल प्रदर्शन नहीं बल्कि समुदाय के भीतर इन परंपराओं के जीवित रहने की प्रक्रिया को मजबूत करना है।

वागड़ की पारम्परिक होली और गैर नृत्य हमें यह समझने का अवसर देते हैं कि त्योहार केवल धार्मिक उत्सव नहीं बल्कि समाज, प्रकृति और संस्कृति के बीच संतुलन बनाए रखने की व्यवस्था भी होते हैं। यह परंपरा पूरे भारत की सांस्कृतिक विविधता और आदिवासी ज्ञान प्रणाली की समृद्धि को बताती है, बल्कि यह भी बताती है कि स्थायी सामाजिक संरचनाएँ किस प्रकार सामूहिक स्मृति, पारिस्थितिकी ज्ञान और सांस्कृतिक अनुशासन पर आधारित होती हैं। वागड़ की होली इस सत्य का जीवंत उदाहरण है कि जब समाज अपनी जड़ों से जुड़ा रहता है, तब उसकी संस्कृति भी जीवित और सशक्त बनी रहती है।

वागड़ रेडियो 90.8 FM
वाग्धारा, कुपड़ा
SCAN ME
अधिक जानकारी के लिये सम्पर्क करें –
वागड रेडियो 90.8 FM, मुकाम–पोस्ट कुपड़ा, वाग्धारा केम्पस, बाँसवाड़ा (राज.) 327001
फोन नम्बर है – 9460051234 ई–मेल आईडी – radio@vaagdhara.org
यह "वातें वाग्धारा नी" केवल आंतरिक प्रसारण है।

संकलन एवं सहयोग : **जागृती भट्ट**